पंचदेव सिंह

बनाम

बिहार राज्य

7 दिसंबर, 2001

[उमेश सी. बनर्जी एवं के.जी. बालकृष्णन, न्यायमूर्तिगण]

साक्ष्य अधिनियम, 1872: धारा 32.

मृत्युकालीन कथन — विश्वसनीयता — अभियुक्त — मृत्युकालीन कथन के आधार पर दोषसिद्धि — कथन में अपराध स्थल पर अभियुक्त की उपस्थिति के संबंध में अभिकथन — चिकित्सक की उपस्थिति में दंडाधिकारी द्वारा अभिलिखित कथन — दंडाधिकारी की यह संतुष्टि कि कथन करते समय घायल मानसिक रूप से स्वस्थ अवस्था में था — कोई चिकित्सीय प्रमाणन नहीं कि घायल मानसिक रूप से स्वस्थ अवस्था में था — अभिनिर्धारित, ऐसे कथन पर अवलंब करना सुरक्षित नहीं।

दंड संहिता, 1860 धारा 302, 148 और 149।

हत्या — अभियुक्त — मृत्युकालीन कथन के आधार पर दोषसिद्धि — वैधता।

अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 **की धारा** 149 **के साथ पठित धारा** 302 **के अंतर्गत दोषसिद्ध किया गया। उसे धारा** 148 **एवं** 149 **के साथ पठित भारतीय दंड संहिता की धारा** 324 **के अंतर्गत भी दोषसिद्ध किया गया। विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी पर अधिरोपित दोषसिद्धि एवं आजीवन कारावास के दंड की उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई। विचारण न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालय दोनों ने घटनास्थल पर अपीलार्थी अभियुक्त की उपस्थिति के संबंध में मृत्युकालीन कथन में मृतक के बयान पर अवलंब किया। कथन**

चिकित्सक की उपस्थिति में दंडाधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया था। यद्यपि दंडाधिकारी ने यह मत व्यक्त किया कि घायल कथन करने की मानसिक रूप से स्वस्थ अवस्था में था, तथापि कथन पर उस आशय का कोई प्रमाणन या चिकित्सक के हस्ताक्षर नहीं लिए गए। अपने साक्ष्य में दंडाधिकारी ने यह भी कथन किया कि उसे स्मरण नहीं कि मृतक ने कथन पर अपने हस्ताक्षर किए थे या नहीं। इस अपील में प्रश्न यह है कि क्या ऐसा कथन स्वयं में अपीलार्थी के विरुद्ध पर्याप्त साक्ष्य का तुल्य होगा जो उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई दोषसिद्धि एवं दंड को न्यायोचित ठहराए।

अपील को स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1. मृत्युकालीन कथन स्वयं में एक मूलभूत साक्ष्य के रूप में माना जा सकता है और बिना किसी संपुष्टि के दोषसिद्धि एवं दंडादेश के आदेश का आधार हो सकता है, बशर्ते कि वह न्यायालय के मन में विश्वास एवं विश्वसनीयता की भावना उत्पन्न करे। कथन ऐसा होना चाहिए जो तथ्यात्मक संदर्भ में विश्वास उत्पन्न करे। [510-ख; घ]

2. वर्तमान मामले में न्यायालय अपील के अधीन निर्णय को समर्थन एवं सहमति प्रदान करने के लिए कथन पर अपना विश्वास अभिलिखित करने में असमर्थ है। केवल न्यायिक दंडाधिकारी ने साक्षी कटघरे से यह कहा है कि कथनकर्ता बयान देने की उपयुक्त अवस्था में था और वह इस संबंध में अन्यथा संतुष्ट था। चिकित्सक उपलब्ध था किंतु दुर्भाग्यवश कथनकर्ता की अवस्था के संबंध में न तो कोई प्रमाणन है और न ही कथन में चिकित्सक के हस्ताक्षर हैं। चिकित्सक ने बयान देने वाले व्यक्ति की स्वस्थता का प्रमाणन क्यों नहीं किया अथवा अपने हस्ताक्षर भी क्यों नहीं किए, इसका कोई उत्तर नहीं है। दंडाधिकारी को भी यह स्मरण नहीं था कि मृतक ने अपने हस्ताक्षर किए थे या नहीं, किंतु चूंकि मृतक के नाम से पूर्व "बा.अं." का कोई उल्लेख नहीं है, अतः स्पष्टतः मृत्युकालीन कथन पर बायां अंगूठे का निशान नहीं है। यह वह कथन है जो उस एकमात्र महत्वपूर्ण साक्ष्य के

रूप में हुआ जिसके आधार पर विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि वर्तमान अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत दोषी पाया जाना चाहिए जो आजीवन कारावास के दंड की अपेक्षा करती है। भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत दोषसिद्धि के लिए अवलंब करना अधिक सुरक्षित साक्ष्य नहीं है।

[509- ज; 510- क; ख- ङ]

रामनाथ माधोप्रसाद और अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य, **एआईआर (1953) एससी 420, संदर्भित।**

ताराचंद दामू सुतार बनाम महाराष्ट्र राज्य, **एआईआर (1962) एससी 130;** *मुन्नू राजा और एक अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य,* **एआईआर (1976) एससी 2199;** *अरविंद सिंह बनाम बिहार राज्य,* **जेटी (2001) 5 एससी 127 और** पापरामबका *रोसम्मा एवं अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य,* **[1999] 7 एससीसी 695, अवलंबित।**

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील सं. 497/2000.

पटना उच्च न्यायालय के आपराधिक अपील सं. 64/1989 (आर) में दिनांक 14.9.99 के निर्णय एवं आदेश से।

अपीलकर्ता की ओर से जसपाल सिंह, एच.एम. सिंह और अनिल हुड्डा।

उत्तरदाता की ओर से अशोक माथुर।

न्यायालय का निर्णय

न्यायमूर्ति बनर्जी द्वारा सुनाया गया: मृत्युकालीन कथन की ग्राह्यता पर पांच दशकों से अधिक समय से न्यायिक संवीक्षा होती रही है। जहां *रामनाथ* के मामले *(रामनाथ माधोप्रसाद एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. (1953) एस.सी. 420)* में पूर्ववर्ती दृष्टिकोण यह

था कि बिना आगे संपुष्टि के केवल मृत्युकालीन कथन द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर अभियुक्त व्यक्ति को दोषसिद्ध करना सुरक्षित नहीं है, वहीं इस न्यायालय की *तारा चंद* मामले *(तारा चंद दामू सुतार बनाम महाराष्ट्र राज्य, ए.आई.आर. (1962) एस.सी. 130)* में वृहत्तर खंडपीठ के निर्णय ने स्पष्ट रूप से अभिमत व्यक्त किया कि मृत्युकालीन कथन के आधार पर दोषसिद्धि, जिसकी शुद्धता के विरुद्ध कोई सुदृढ़ कारण न दिए गए हों या सुझाए गए हों, विधि में संधार्य है।

इस न्यायालय ने एक दशक पश्चात *मुन्नू राजा एवं एक अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. (1976) एस.सी. 2199* में विधि को इस आशय से अभिव्यक्त किया कि यद्यपि मृत्युकालीन कथन को इस कारण सावधानी से देखा जाना चाहिए कि कथनकर्ता को प्रति-परीक्षण के अधीन नहीं किया जा सकता, तथापि न तो विधि का कोई नियम है और न ही प्रज्ञा का कोई ऐसा नियम है जो विधि के नियम के रूप में कठोर हो गया हो कि मृत्युकालीन कथन पर संपुष्टि के बिना कार्रवाई नहीं की जा सकती। इस न्यायालय ने आगे यह अभिमत व्यक्त किया कि न्यायालय को संपुष्टि की खोज नहीं करनी चाहिए जब तक कि वह इस निष्कर्ष पर न पहुंचे कि मृत्युकालीन कथन किसी दुर्बलता से ग्रस्त था।

इस न्यायालय का इस विषय से संबंधित एक नवीनतम उद्घोषण *अरविंद सिंह बनाम बिहार राज्य;* जे.टी. (2001) 5 एस.सी. 127 के निर्णय में पाया जाता है, जिसमें इस न्यायालय ने अभिमत व्यक्त किया कि पूर्व में उल्लिखित सावधानी एवं सतर्कता के कारकों के अतिरिक्त मृत्युकालीन कथन को अन्यथा विश्वसनीय माना जाना चाहिए। इस प्रकार प्रश्न यह बन जाता है कि क्या मृत्युकालीन कथन उस पर विश्वास उत्पन्न करने में सक्षम रहा है अथवा नहीं — क्या यह विश्वसनीय है अथवा यह अन्वेषण की लापरवाही को छुपाने का मात्र एक प्रयास है — इसे न्यायालय की संतुष्टि के लिए यह आकर्षित करना होगा कि उस पर अवलंब किया जाना चाहिए न कि अविश्वास किया जाना चाहिए। न्यायालय का विश्वास ही सर्वोच्च लक्ष्य है और यदि न्यायिक विवेक में उसकी कोई पुष्टि हो, तो किसी अविश्वास या अनास्था का प्रश्न ही

नहीं उठेगा। तथापि यदि कोई दुर्बलता हो, चाहे वह कितनी भी नगण्य हो, न्यायालय को, जब तक कि वह उसकी विश्वसनीयता के बारे में अन्यथा संतुष्ट न हो, कुछ संपुष्टि की खोज करनी चाहिए, किंतु यदि यह अन्यथा हो तो संपुष्टि की अपेक्षा का प्रश्न नहीं उठेगा — न्यायिक विवेक का विश्वास आकर्षित करने वाला मृत्युकालीन कथन दोषसिद्धि को बनाए रखने के लिए पर्याप्त साक्ष्य होगा। मृत्युकालीन कथन का कोई निर्धारित प्रारूप नहीं है और न ही कथन का कोई लंबा एवं सुव्यवस्थित होना आवश्यक है। वास्तव में, परिपूर्ण शब्दावली एवं सुव्यवस्थित मृत्युकालीन कथन न्यायालय के मन में प्रतिकूल प्रभाव एवं संदेह उत्पन्न कर सकता है क्योंकि मृत्युकालीन कथन गणितीय परिशुद्धता से नहीं बनाए जाने चाहिए — कथनकर्ता को उपलब्ध परिस्थिति की वर्तमान स्थिति के परिणामस्वरूप परिस्थिति का स्मरण करने में सक्षम होना चाहिए।

मामले में निहित मूल प्रश्न पर विचार करने तथा तथ्यात्मक पृष्ठभूमि की ओर अभिमुख होने के उपरांत, यह उल्लेखनीय है कि अपर सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा दिनांक 23 दिसंबर, 1988 को पारित दोषसिद्धि एवं दंडादेश के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध दो पृथक अपीलें, यथा — *आपराधिक अपील सं. 64/1989 (पंचदेव सिंह बनाम बिहार राज्य) एवं दूसरी आपराधिक अपील सं. 65/1989 (दून बहादुर सिंह बनाम बिहार राज्य)*, उच्च न्यायालय ने एक संयुक्त निर्णय द्वारा अधीनस्थ न्यायालय द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध पारित दोषसिद्धि एवं दंडादेश के आदेश की पुष्टि की। विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, धनबाद ने वर्तमान अपीलार्थी को एक श्रीराम सिंह की हत्या कारित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 एवं भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अंतर्गत दोषसिद्ध किया और आजीवन सश्रम कारावास का दंड दिया। अभियुक्त को आगे भारतीय दंड संहिता की धारा 148 एवं धारा 149 के साथ पठित धारा 324 के अंतर्गत भी दोषसिद्ध किया गया और प्रत्येक अभियोग पर 3 वर्ष के सश्रम कारावास का दंड दिया गया, तथापि दंडादेश को साथ-साथ चलाने का निर्देश दिया गया। उच्च न्यायालय ने उपरोक्त उल्लिखित अनुसार दोनों अपीलों पर

संयुक्त निर्णय द्वारा विचार किया, विद्वान सत्र न्यायाधीश के निर्णय की पुष्टि की और पुष्टि के इसी आदेश के विरुद्ध वर्तमान अपीलार्थी पंचदेव सिंह ने संविधान के अनुच्छेद 136 के अंतर्गत विशेष अनुमति अपील के लिए इस न्यायालय में आवेदन किया और इस न्यायालय ने दिनांक 12 मई, 2000 के अपने आदेश द्वारा ऐसी अनुमति प्रदान की।

इस अवसर पर संक्षेप में अभियोजन मामले की ओर अभिमुख होना सुविधाजनक होगा। दिनांक 20.12.1980 को प्रातः लगभग 8 बजे, सूचक रामसुमेर सिंह (अभियोजन साक्षी-8), श्रीराम सिंह (मृतक) के साथ किसी चुनाव कार्य से मोदीदीह कोलियरी कार्यालय जा रहे थे और जब रास्ते में वे मोदीदीह डायरेक्टर के तकनीकी बंगले से लगभग 50 गज की दूरी पर सड़क पर पहुंचे, तो सूचक ने अपीलार्थियों, सह-अभियुक्त सकलदेव सिंह, विनोद कुमार सिंह (तत्पश्चात मृत) एवं नागेंद्र सिंह (जो विचारण के दौरान मर गए) को सड़क के पश्चिम में खड़ी अपनी कार सं. बी.एच.डब्ल्यू. 98 के साथ खड़े देखा, और सकलदेव सिंह ने श्रीराम सिंह (मृतक) पर बम फेंका जो उसके पेट पर लगा, और तत्पश्चात नागेंद्र सिंह एवं दून बहादुर सिंह ने बम फेंके जिससे मृतक को चोटें आईं और सूचक को भी घाव लगे। शोर मचाने पर साक्षी वहां आए और अपराधी खड़ी कार में लोयलाबाद की ओर भाग गए। सूचक, भगवान सिंह एवं अन्य साक्षी श्रीराम सिंह को लोयलाबाद केंद्रीय अस्पताल ले गए, जहां जोगता थाने से संबद्ध पुलिस अधिकारी द्वारा दिनांक 20.12.1980 को प्रातः 10:30 बजे रामसुमेर सिंह (अभियोजन साक्षी-8) का फर्दबयान अभिलिखित किया गया। घटना के पीछे का प्रयोजन पूर्ववर्ती शत्रुता होना आरोपित है। इसके आधार पर औपचारिक प्राथमिकी (प्रदर्श-2) अंकित की गई और अन्वेषण प्रारंभ हुआ। अन्वेषण के दौरान, घायल (श्रीराम सिंह) घटना के अगले दिन प्रातः लगभग 10:30 बजे सदर अस्पताल, धनबाद में घावों के कारण मर गया, और अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत मामले में अपीलार्थियों एवं अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध न्यायालय में आरोप-पत्र दाखिल किया गया।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अंतर्गत अभिलिखित अपने बयानों में, अपीलार्थियों ने घटना में अपनी संलिप्तता से इनकार किया और मिथ्या फंसाए जाने का कथन किया।

विचारण में, अभियोजन ने कुल 14 साक्षियों की परीक्षा की। उनमें से तीन औपचारिक साक्षी हैं। औपचारिक साक्षियों में से एक को भी अन्य आठ के साथ पक्षद्रोही घोषित किया गया। किंतु यह स्वीकार्य है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत दोषसिद्धि एवं आजीवन सश्रम कारावास का दंड, अपर सत्र न्यायाधीश, धनबाद एवं उच्च न्यायालय दोनों द्वारा, मृतक के मृत्युकालीन कथन के आधार पर किया गया है, जो स्वीकार्यतः वर्तमान अपीलार्थी को अपराध में संलिप्त नहीं करता। तथापि, घटनास्थल पर वर्तमान अपीलार्थी की उपस्थिति के संबंध में उसके विरुद्ध एक सकारात्मक कथन है और मृत्युकालीन कथन में इसी कथन के आधार पर उच्च न्यायालय ने विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित दोषसिद्धि एवं दंडादेश को बरकरार रखा। अतः मृत्युकालीन कथन पर कुछ विस्तार से विचार किया जाना आवश्यक है। सुविधा की दृष्टि से मृत्युकालीन कथन नीचे उद्धृत किया जाता है:

> "श्री राम सिंह पिता चंदवार सिंह, ग्राम अकबरपुर, थाना (अपठनीय), जिला आजमगढ़, वर्तमान पता मोदीदीह, थाना जोगता, जिला धनबाद, का मृत्युकालीन कथन, दिनांक 20.12.1980 को प्रातः 11:20 बजे सदर अस्पताल, धनबाद में अभिलिखित किया जा रहा है। घायल के अनुसार घटना आज प्रातः 8:00 बजे हुई।
>
> प्रश्न: आपको कब, कैसे और कहां चोट लगी?
>
> उत्तर: सकलदेव सिंह पिता मुखराम सिंह ने मोदीदीह सड़क जो टेटनवारी स्टेशन रोड की ओर जाती है, पर सामने की ओर से मेरे पेट पर बम फेंका।
>
> प्रश्न: क्या आप कुछ और कहना चाहते हैं?

उत्तर: नागेंद्र सिंह पिता मुखराम सिंह ने भी पीछे से बम फेंककर मारा। दून बहादुर सिंह और विनोद सिंह पिता मुखराम सिंह भी बम लेकर दौड़े। पंचदेव सिंह भी उनके साथ था। जब बम मुझे लगा तो मैं भाग गया किंतु पीछे की ओर एक अन्य बम लगने से जमीन पर गिर पड़ा। मैं बनियान, कमीज और ऊनी जैकेट पहने हुए था। मैं मोदीदीह से यूनियन कार्यालय, मोदीदीह जा रहा था।"

उपरोक्त उल्लिखित कथन की दाखिल प्रति में कोई हस्ताक्षर नहीं है, किंतु मूल के अवलोकन से यह प्रकट होता है कि मृतक ने कथन पर हस्ताक्षर किए थे, किंतु हस्ताक्षर पृष्ठ के निचले भाग में अंतिम लिखाई और हस्ताक्षर के बीच कुछ रिक्त स्थान के साथ प्रकट होते हैं। इस संदर्भ में अभियोजन साक्षी-12 दंडाधिकारी का साक्ष्य कुछ प्रासंगिक प्रतीत होता है:

"...उस दिन मुझे मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद का आदेश मिला कि घायल श्री राम सिंह पुत्र श्री चंदर सिंह निवासी अकलीपुर, थाना मेह नगर, जिला आजमगढ़, वर्तमान पता मोदीदीह, थाना जोगता, जिला धनबाद का मृत्युकालीन कथन अभिलिखित करूं। यह आदेश प्राप्त होने के उपरांत मैं उसी दिन सदर अस्पताल, धनबाद गया और उक्त घायल का मृत्युकालीन कथन 11:20 बजे अभिलिखित किया। मैंने इसे डॉ. रमण शंकर प्रसाद की उपस्थिति में अभिलिखित किया। मैंने घायल द्वारा कहे अनुसार उसका बयान अभिलिखित किया और वही उसे पढ़कर सुनाया गया। बयान को सही पाने के उपरांत उसने अपने हस्ताक्षर किए। उक्त बयान मेरे द्वारा लिखा एवं हस्ताक्षरित है। मृत्युकालीन कथन प्रदर्श-5 के रूप में चिह्नित है।"

प्रति-परीक्षण में, साक्षी ने कथन किया:

"……

3. मृत्युकालीन कथन अभिलिखित करने से पूर्व मैंने घायल से उसका नाम आदि पूछा। वह कथन करने की उपयुक्त अवस्था में है या नहीं, यह जानने के लिए मैंने कोई अन्य प्रश्न नहीं पूछा। उसने स्वेच्छा से अपना नाम और पूरा पता बताया, इसलिए मैंने अपने आप को संतुष्ट किया कि वह कथन करने की उपयुक्त अवस्था में है। कथन घायल को पढ़कर सुनाया गया और उसे सही पाने के उपरांत उसने अपने हस्ताक्षर किए जो मेरे अभिलेख पर नहीं हैं। कथन के नीचे 'राम सिंह' अंकित है, इसलिए मैं कहता हूं कि घायल ने अपने हस्ताक्षर किए। मुझे स्मरण नहीं कि उसने हस्ताक्षर किए थे या नहीं। 'राम सिंह' से पूर्व बा.अं. का कोई उल्लेख नहीं है। मृत्युकालीन कथन पर राम सिंह का बायां अंगूठे का निशान नहीं है।

4. घायल मुझे पहले से ज्ञात नहीं था। घायल का परिचय चिकित्सक ने कराया। यह तथ्य मेरे द्वारा मृत्युकालीन कथन पर दर्ज नहीं किया गया।"

इस प्रकार विचारणीय प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि क्या उपरोक्त कथन स्वयं में वर्तमान अपीलार्थी के विरुद्ध पर्याप्त साक्ष्य का तुल्य होगा जो उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई दोषसिद्धि एवं दंडादेश को न्यायोचित ठहराए।

ऐसा करने से पूर्व, इस न्यायालय के रोसम्मा *(पापारम्बका रोसम्मा एवं अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य,* [1999] 7 एस.सी.सी. 695) के निर्णय पर एक दृष्टि डालना कुछ प्रासंगिक होगा जिसमें इस न्यायालय ने अभिमत व्यक्त किया कि जहां दोषसिद्धि केवल मृत्युकालीन कथन पर आधारित हो, वहां न्यायालय का यह दायित्व है कि वह मृत्युकालीन कथन एवं उसका समर्थन करने वाले साक्षियों के साक्ष्य दोनों पर अत्यंत सावधानी एवं सतर्कता से विचार करे। *रोसम्मा* (उपरोक्त) में चिकित्सक की भी परीक्षा की गई थी और चिकित्सक ने कथन के अंत में यह प्रमाण-पत्र जोड़ा था कि "बयान अभिलिखित करते समय रोगी चेतनावस्था में है।" इसी पर इस न्यायालय ने अभिमत व्यक्त किया कि विचारणीय प्रश्न यह

है कि क्या दंडाधिकारी इस निश्चित निष्कर्ष पर पहुंच सकते थे कि मृत्युकालीन कथन अभिलिखित करने से पूर्व विद्यमान मानसिक अवस्था को प्रमाणित करने वाले चिकित्सक के प्रमाण-पत्र की अनुपस्थिति में घायल कथन करने की मानसिक रूप से स्वस्थ अवस्था में था और इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उक्त कथन करते समय घायल मानसिक रूप से स्वस्थ अवस्था में था, इस आशय के चिकित्सीय प्रमाणन की अनुपस्थिति में, दंडाधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि को स्वीकार करना अत्यंत जोखिमपूर्ण होगा, जिन्होंने यह मत व्यक्त किया था कि कथन करते समय घायल मानसिक रूप से स्वस्थ अवस्था में था। *रोसम्मा* (उपरोक्त) में कथन करने से पूर्व चिकित्सक द्वारा कथनकर्ता की मानसिक अवस्था का पता करना अभियोजन के लिए सिद्ध करने की एक आवश्यक अपेक्षा बताई गई है — प्रासंगिक रूप से — कथन के अंत में चिकित्सक द्वारा यह प्रमाणन भी कि बयान अभिलिखित करते समय रोगी चेतनावस्था में है, पर्याप्त नहीं बताया गया — यह इस कारण है कि मृत्युकालीन कथन अभियुक्त की दोषसिद्धि एवं दंडादेश के लिए केवल एक परिस्थिति मात्र है। वर्तमान में, तथापि, कथनकर्ता की अवस्था के संबंध में चिकित्सक का प्रमाणन भी नहीं है। केवल न्यायिक दंडाधिकारी ने साक्षी कटघरे से यह कहा है कि कथनकर्ता बयान देने की उपयुक्त अवस्था में था और वह इस संबंध में अन्यथा संतुष्ट था। चिकित्सक उपलब्ध था क्योंकि दंडाधिकारी ने उनका नाम डॉ. रमण शंकर प्रसाद बताया था किंतु दुर्भाग्यवश कथन में न तो कोई प्रमाणन है और न ही चिकित्सक के हस्ताक्षर हैं।

जैसा कि उपरोक्त दर्ज किया गया है, कथन स्वयं में एक मूलभूत साक्ष्य के रूप में माना जा सकता है और बिना किसी संपुष्टि के दोषसिद्धि एवं दंडादेश के आदेश का आधार हो सकता है, बशर्ते कि वह न्यायालय के मन में विश्वास एवं विश्वसनीयता की भावना उत्पन्न करे — चिकित्सक ने बयान देने वाले व्यक्ति की स्वस्थता का प्रमाणन क्यों नहीं किया अथवा अपने हस्ताक्षर भी क्यों नहीं किए, इसका कोई उत्तर नहीं है। दंडाधिकारी को भी यह स्मरण नहीं था कि मृतक ने अपने हस्ताक्षर किए थे या नहीं, किंतु चूंकि "राम सिंह" से पूर्व

"बा.अं." का कोई उल्लेख नहीं है, अतः स्पष्टतः मृत्युकालीन कथन पर बायां अंगूठे का निशान नहीं है। यह वह कथन है जो उस एकमात्र महत्वपूर्ण साक्ष्य के रूप में हुआ जिसके आधार पर विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि वर्तमान अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत दोषी पाया जाना चाहिए जो आजीवन कारावास के दंड की अपेक्षा करती है। इस न्यायालय का *रोसम्मा* (उपरोक्त) का निर्णय सीधे अपील के अधीन निर्णय के विपरीत है। हमारे मत में यह भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत दोषसिद्धि के लिए अवलंब करना अन्यथा भी अधिक सुरक्षित साक्ष्य नहीं है। कथन ऐसा होना चाहिए जो तथ्यात्मक संदर्भ में विश्वास उत्पन्न करे। तथापि, हम अपील के अधीन निर्णय को समर्थन एवं सहमति प्रदान करने के लिए ऐसे कथन पर अपना विश्वास अभिलिखित करने में असमर्थ हैं। जैसा कि उपरोक्त दर्ज किया गया है, *रोसम्मा* (उपरोक्त) विपरीत निर्णय करता है और हम उस पर अपनी सादर सहमति दर्ज करते हैं, इसके अतिरिक्त यह एक वृहत्तर खंडपीठ का निर्णय होने के कारण जो बाध्यकारी पूर्व-निर्णय के रूप में कार्य करना चाहिए, टिप्पणियों एवं निष्कर्षों पर भी, और उपर्युक्त के आलोक में हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय स्पष्ट त्रुटि में पड़ा। अतः अपील के अधीन निर्णय संधार्य नहीं है। इस प्रकार अपील स्वीकार की जाती है। यदि किसी अन्य मामले में अपेक्षित न हो तो अपीलार्थी को तत्काल मुक्त किया जाए।

टी.एन.ए. अपील स्वीकृत की गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।